ISSN No. 2349-4654
नाद - नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक वर्ष : 1, अंक : 2, दिसम्बर 2014

संगीत कला के शिक्षण में निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की प्रभावकता

प्रोफेसर इना शास्त्री
वनस्थली विद्यापीठ, संगीत विभाग, वनस्थली, राजस्थान

यक्षिता वर्मा
शोधार्थी (संगीत विभाग), वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली, राजस्थान

सार-संक्षेप

संगीत प्रायोगिक विषय है। यह एक पूर्णत: प्रदर्शन की कला है। उसे अभिव्यक्त करना ही उसका मुख्य उद्देश्य है किन्तु शिक्षण संस्थाओं में अभिव्यक्ति को पूर्णत: नकार दिया है न तो विद्यार्थियों को अपनी कला के प्रदर्शन का अवसर दिया जाता है न ही अपनी गलतियों को सुधारने का। ऐसे में संगीत शिक्षक को चाहिए की वह अपने ज्ञान व विषयों की बारीकियों को विद्यार्थियों को समझाएँ जब तक विद्यार्थी उन्हें पूर्ण रूपेण आत्मसात न कर लें। शिक्षक को संगीत कला की शिक्षा देते समय छात्र की प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि संगीत प्रायोगिक विषय है और यदि संगीत कला के सफल प्रशिक्षण हेतु शिक्षक द्वारा निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण जैसी तकनीकों का प्रयोग किया जाये तो अवश्य ही संगीत कला के शिक्षण में गुणवश्रा में वृद्वि सम्भव है। निदानात्मक से तात्पर्य समस्या अन्वेषण एवं उसके समाधान से है। यह चिकित्सा शास्त्र का शब्द है जैसे रोगी का लक्षण देखकर रोग का निश्चय करते हैं उसी प्रकार शिक्षण के समय शिक्षक बालक की क्रियाओं व व्यवहार का निरीक्षण कर उनके दोष व त्रुटियों का पता लगाते हैं। जिससे वह विविध विधियों, विधाओं, प्रक्रियाओं के माध्यम से उसका संशोधन कर सके। निरीक्षण करने के बाद शिक्षक बालकों की कमजोरियों व पिछड़ेपन का निरीक्षण करने के निमिश्र जो शिक्षण क्रम प्रस्तुत किया जाता है उसे उपचारात्मक शिक्षण कहते हैं। संगीत कला के शिक्षण में निदान बालकों के महत्वपूर्ण सभी पक्षों में सहयोग देते हुए शैक्षिक प्रक्रिया को शाश्वत रूप देकर प्रगतिशील बनाता है। इसीलिए 'निदानात्मक परीक्षण व उपचारात्मक शिक्षण' का प्रयोग सफल शिक्षण हेतु किया जाना चाहिए।

शोध-पत्र

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसलिए वह अकेले जीवनयापन नहीं कर सकता। उसे एक सामाजिक वातावरण की आवश्यकता होती है जिससे वह अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए अन्य व्यक्तियों का सहयोग कर जीवनयापन करता है। किन्तु सुसंस्कृत और सभ्य जीवन के लिए इतना काफी नहीं है। सभ्य जीवन जीने के लिए मनुष्य को चाहिए कि वह अपने जीवन में किसी कला को आत्मसात कर एक आदर्श जीवनयापन करे।

मानव में भावनाओं व कोमल अनुभूतियों को ग्रहण करने की क्षमता होती है इसीलिए वह सभी जीवों में श्रेष्ठ माना जाता है। मानव स्वरों की कोमल अनुभूतियों को ग्रहण कर स्वरों की सूक्ष्म लहरियों पर विमोहित होकर सुखद अनुभूति को प्राप्त करता है। इसी भावना के कारण वह संगीत कला को सीखना चाहता है जिससे इस कला को ग्रहण कर वह अपने मन को दिव्य आनन्द व प्रसन्नता से परिपूर्ण कर सके। इसी प्रवृत्ति के कारण वह संगीत शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षण संस्थाओं का माध्यम चुनता है।

''आज संगीत का प्रचार-प्रसार अपनी चरम सीमा पर है। शास्त्रीय संगीत के अनेक संगीत शिक्षण केन्द्र स्थापित हो गये हैं। सरकार ने भी संगीत विषय में उच्च स्तरीय शिक्षा प्रारम्भ कर दी है। अनेक संगीत विद्यालयों की स्थापना, सांस्कृतिक शिष्ट मण्डलों को विदेशों में भेजना आदि कार्य तीव्र गति से किये जा रहे हैं। संगीत कला के शिक्षण में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम उठाया गया जिसमें शिक्षा मंत्रालयों द्वारा विश्वविद्यालयों में संगीत एक प्रतिष्ठित विषय के रूप में स्थापित हुआ है। जिससे संगीत कला का काफी प्रचार सम्भव हो सका।''[1]

''आज अधिकतर माता-पिता अपने बच्चों को संगीत सिखाना चाहते हैं और कलाकार बनाने की उत्कृष्ट इच्छा रखते हैं और इस कार्य में संगीत शिक्षण संस्थाएँ महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं, किन्तु शिक्षण और विद्यार्थियों में जो आपसी व्यवहार व सामंजस्य आवश्यक है उसका अभाव है जिससे विद्यार्थियों में संगीत की गुणात्मक शिक्षा का अभाव दिखाई देता है। इसमें शिक्षक व छात्र में से किसी एक को दोषी मानना उचित नहीं है क्योंकि सफल शिक्षण के लिए शिक्षक और छात्रा दोनों ही उत्तरदायी होते हैं।''[2] आज के विद्यार्थी संगीत को बहुत सरल समझते हैं साथ ही शिक्षक विद्यार्थियों को संगीत की बारीकियाँ, तकनीकियों का ज्ञान कराने के बजाय निश्चित पाठ्यक्रम को पूरा करना अपना ध्येय समझते हैं। जबकि संगीत के लिए स्वरों की बारीकी, तकनीकी, रियाज़, अभ्यास आदि को सिखाना आवश्यक है किसी निश्चित पाठ्यक्रम को पूरा कराना नहीं।

संगीत प्रायोगिक विषय है। यह एक पूर्णत: प्रदर्शन की कला है। उसे अभिव्यक्त करना ही उसका मुख्य उद्देश्य है किन्तु शिक्षण संस्थाओं में

अभिव्यक्ति को पूर्णत: नकार दिया है न तो विद्यार्थियों को अपनी कला के प्रदर्शन का अवसर दिया जाता है न ही अपनी गलतियों को सुधारने का। ऐसे में संगीत शिक्षक को चाहिए की वह अपने ज्ञान व विषयों की बारीकियों को विद्यार्थियों को समझाएँ जब तक विद्यार्थी उन्हें पूर्ण रूपेण आत्मसात न कर लें। शिक्षक को संगीत कला की शिक्षा देते समय छात्र की प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि संगीत प्रायोगिक विषय है और यदि संगीत कला के सफल प्रशिक्षण हेतु शिक्षक द्वारा **निदानात्मक परीक्षण** एवं **उपचारात्मक शिक्षण** जैसी तकनीकों का प्रयोग किया जाये तो अवश्य ही संगीत कला के शिक्षण में गुणवश्रा में वृद्धि सम्भव है।

''निदान से तात्पर्य है विद्यार्थियों की अधिगम प्रविधि में मौजूद समस्याओं का ज्ञान, कथन और सीमांकन। इसी के पूरक के रूप में विकासात्मक अध्ययन का अर्थ है निदान की प्रक्रिया में निन्दित समस्याओं के निराकरण हेतु सुविचारित और पूर्व परिक्षित उपायों के अनुसार शिक्षण करना।'' अर्थात् सरल शब्दों में—निदानात्मक से तात्पर्य समस्या अन्वेषण एवं उसके समाधान से है। यह चिकित्सा शास्त्र का शब्द है जैसे रोगी का लक्षण देखकर रोग का निश्चय करते हैं उसी प्रकार शिक्षण के समय शिक्षक बालक की क्रियाओं व व्यवहार का निरीक्षण कर उनके दोष व त्रुटियों का पता लगाते हैं। जिससे वह विविध विधियों, विधाओं, प्रक्रियाओं के माध्यम से उसका संशोधन कर सके। ''निरीक्षण करने के बाद शिक्षक बालकों की कमजोरियों व पिछड़ेपन का निरीक्षण करने के निमित्त जो शिक्षण क्रम प्रस्तुत किया जाता है उसे **उपचारात्मक शिक्षण** कहते हैं।''[4] संगीत कला के शिक्षण में निदान बालकों के महत्वपूर्ण सभी पक्षों में सहयोग देते हुए शैक्षिक प्रक्रिया को शाश्वत रूप देकर प्रगतिशील बनाता है। शिक्षक द्वारा निदान किये जाने हेतु कुछ निदान-परीक्षण बनाये जाते हैं। जिसे निदानात्मक परीक्षण कहते हैं। इन परीक्षणों से किसी क्षेत्र विशेष स्तर का ज्ञान न कराकर उस समस्या का पता लगाया जाता है जहाँ विषय समझने में छात्र को कोई कठिनाई होती है। **संगीत कला के शिक्षण में निदानात्मक परीक्षणों का उपयोग** इसलिए किया जाता है।

1. ताकि विद्यार्थी के किसी विशिष्ट विषय की उपलब्धि की कमी का पता लगाया जा सके।
2. शिक्षण एवं अधिगम को प्रभावशाली बनाया जा सके।
3. शिक्षक स्वयं का मूल्यांकन कर सके।
4. छात्रों व अभिभावकों को उचित मार्गदर्शन प्राप्त हो सके।
5. शिक्षक द्वारा छात्रों के विशिष्ट गुणों का मूल्यांकन किया जा सके।

शैक्षिक प्रक्रिया में निदान बालकों के महत्त्वपूर्ण सभी पक्षों में सहयोग देकर शैक्षिक प्रक्रिया को शाश्वत रूप देकर प्रगतिशील बनाता है। बिना निदान किए शिक्षण करने से शिक्षक के स्वयं तथा छात्र दोनों का ही श्रम तथा समय व्यर्थ जाता है। निदान हेतु शिक्षक द्वारा निदानात्मक परीक्षण बनाए जाते हैं। परीक्षण बनाने की प्रक्रिया अनेक चरणों में सम्पन्न होती है। जिसमें सर्वप्रथम शिक्षक बालक के पिछड़ेपन का कारण जानने का प्रयास करते हैं। मूलत: बालक के पिछड़ेपन के दो कारण देखे गये हैं जिसमें से प्रथम **आन्तरिक कारण** हैं जिसमें बालक के **शारीरिक दोष** (जैसे कम सुनना, गूँगापन, दृष्टिदोष आदि) **मानसिक दोष** (जैसे बुद्धि मंदता, क्रोध, शर्मिलापन, संवेगात्मक तनाव, हीन भावना, रुचि का अभाव आदि) आते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने बालक के पिछड़ेपन के कुछ बाह्य कारण भी उत्तरदायी माने हैं। जिसके अन्तर्गत - घर सम्बन्धी कारण (जैसे घर में कार्य की अधिकता, परिवार व पड़ौस का व्यवहार ठीक ना होना आदि) विद्यालयी कारण (दोषपूर्ण वातावरण, शिक्षकों का अभाव, स्थान का अभाव, शिक्षण उपकरणों का अभाव आदि) **सामाजिक कारण** (जैसे पास-पड़ौस की गलत प्रवृत्तियों का होना, सामाजिक व्यवस्था का विखण्डित होना आदि) मुख्य हैं। बालक के पिछड़ेपन के कारणों को जानने के लिए अनेक शोध कार्य किये गये इसके आधार पर कुछ प्रतिशत निश्चित किया गया है। जिसमें 60: बुद्धिमंदता, 09: स्वभावगत दोष, 09: शारीरिक दोष, 14: असंतोषजनक वातावरण, 08: विद्यालयी दूषित वातावरण इत्यादि हैं। इनमें से कुछ भी कारण हो यदि विद्यार्थी उक्त कारणों से प्रभावित होते हैं तो विषय को सीखने में त्रुटियाँ करने लगते हैं। शिक्षक का यह कर्तव्य है कि उसके द्वारा पढायी गयी विषय-वस्तु विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन कर सके। अत: उक्त वर्णित किस कमी के द्वारा विद्यार्थियों का अध्ययन प्रभावित हो रहा है इसका कारण जानना शिक्षक के लिए अति आवश्यक हो जाता है। बालक के अध्ययन में पिछड़ेपन के कारण को जानने के पश्चात् शिक्षक शैक्षिक निदान की प्रक्रिया (Procedure of Education Dignosis) निम्न सोपानों के अनुकरण द्वारा करते हैं।

1. छात्रों का चयन—इस चरण में शिक्षक किसी एक विषय में छात्रों द्वारा अनुभव की जा रही कठिनाईयों को जानने के लिए उपलब्धि परीक्षाओं को आधार बनाते हैं एवं अपने अनुभव तथा अवलोकन के आधार पर भी छात्रा का चयन करते हैं।

2. विषय-वस्तु के विशिष्ट क्षेत्र का चयन—छात्रों के चयन के पश्चात् शिक्षक विषय-वस्तु के विशिष्ट क्षेत्र का चयन करता है जैसे—संगीत के विद्यार्थियों को राग यमन सिखाते समय विद्यार्थियों का राग यमन की तान बजाते समय त्रुटि करना।

3. विशिष्ट क्षेत्र में कठिनाई स्थलों का अन्वेषण—विषय-वस्तु के विशिष्ट क्षेत्र के चयनोपरान्त शिक्षक द्वारा यह अन्वेषण किया जाता है कि छात्र को विषय के मूल प्रत्ययों, प्रक्रियाओं, सिद्धान्तों, नियमों, संरचनाओं आदि में से किसे समझने में कठिनाई हो रही है जैसे—संगीत के विद्यार्थियों को राग यमन सिखाते समय, राग यमन की तानें बजाते समय 'नि रे ग' बजाने में त्रुटि करना, 'मं ध प' स्वर संगीत बजाने के स्थान पर 'म प ध' बजाना। इस प्रकार शिक्षक विद्यार्थियों के अध्ययन सम्बन्धी विशिष्ट क्षेत्र में कठिनाई स्थलों का अन्वेषण करते हैं।

4. कठिनाई स्थलों का विश्लेषण—विद्यार्थियों द्वारा अनुभूत विशिष्ट समस्या को पहचानने के बाद शिक्षक कठिनाई स्थलों का विश्लेषण

करते हैं ताकि कोई भी पक्ष उनसे छूटे ना और बालक के द्वारा की गई त्रुटि को आसानी से पहचान कर उसका बाद में उपचार किया जा सके।

शिक्षक सफल शिक्षण हेतु निदानात्मक परीक्षणों व उपचारात्मक शिक्षण जैसी प्रविधियों का प्रयोग करते हैं। अत: वह जानना आवश्यक है कि शिक्षक किस प्रकार संगीत में इन प्रविधियों का प्रयोग करे। मैं इस लेख में उदाहरण द्वारा संक्षेप में प्रस्तुत कर रही हूँ।

सर्वप्रथम शिक्षक यह निर्धारित करता है कि ये परीक्षण किन विद्यार्थियों पर किया जाये एवं व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से किया जाए। अत: ये परीक्षण दो रूपों में किये जाते हैं।

व्यक्ति केन्द्रित जिसमें किसी एक बालक की शैक्षिक त्रुटियों का परिचय प्राप्त किया जाता है। दूसरे वे परीक्षण होते हैं जो समूह केन्द्रित होते हैं। इसमें विशिष्ट समूह की सामूहिक त्रुटियों अथवा कमजोरियों को ज्ञात किया जाता है।[5] अत: शिक्षक को सर्वप्रथम यह निर्धारित करना होता है कि वह व्यक्ति केन्द्रित परीक्षण कर रहे हैं अथवा समूह केन्द्रित। तत्तपश्चात् निदानात्मक परीक्षण पत्र का निर्माण किया जाता है जिसके निम्नलिखित चरण हैं—

सर्वप्रथम बालकों की त्रुटियों का संकलन किया जाता है। फिर त्रुटियों का कारण जाना जाता है। उसके बाद शिक्षक नील पत्र का निर्माण करते हैं जिसमें प्रश्नों का निर्माण, प्रश्नों के अंक निर्धारित किये जाते हैं तत्तपश्चात् त्रुटियों का निवारण किया जाता है। त्रुटियों के निवारणार्थ शिक्षक जो उपचार करते हैं। जिसमें वे सभी त्रुटियों को दूर करने हेतु एक अभ्यास माला प्रस्तुत करते हैं क्योंकि संगीत एक कला है जिसमें निरन्तर अभ्यास से ही निपूर्णता की ओर विद्यार्थी को अग्रसर किया जा सकता है। इसलिए विद्यार्थी द्वारा की गई त्रुटियों के निदान के पश्चात् शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वे उनका उपचारात्मक शिक्षण कर विद्यार्थियों की त्रुटियों को दूर करे। निदान का अपने आप में तब तक कोई महत्व नहीं जब तक कि निदान के उपरान्त उपचार न दिया जाये। उदाहरणस्वरूप जैसे संगीत के विद्यार्थी प्राय: ताल, स्वर, लय सम्बन्धी त्रुटियाँ करते हैं ये कमियाँ ऐसी नहीं कि इनमें सुधार की कल्पना ना की जा सके। अत: संगीत शिक्षक को त्रुटियों में सुधार करने हेतु कुछ अभ्यास मूलक सामग्री जो त्रुटियों से सम्बन्धित व उन पर आधारित हो तैयार करना चाहिए। जैसे सितार सिखने वाले विद्यार्थी प्रारम्भ में बैठक सम्बन्धी, मिज़राब के बोलो सम्बन्धी, बाएँ हाथ की दूसरी उंगली का प्रयोग आदि त्रुटियाँ करते हैं। अत: शिक्षक को विद्यार्थियों की कमी पहचानने के बाद उन्हें बार-बार सही बैठक, बोलों के विकास का अभ्यास करना चाहिए एवं दूसरी उंगली के सही प्रयोग को सिखाने हेतु स्वरों की अभ्यास माला तैयार कर अभ्यास करना चाहिए जैसे विद्यार्थियों को बताया जाना चाहिए कि वे सां तक सरगम इस प्रकार बजाएं —

बायें हाथ की तर्जनी से – सा ग प नि

मध्यमा से – रे म ध सां

बार-बार विद्यार्थियों को सा के परदे पर दा रा, दि दा रा, दा दिर दिर दिर, दा ऽ र दा ऽ र दा का अभ्यास कराया जाए।

मिज़राब के बोलों के आधार पर अलंकार बनाना बहुत सरल होता है। इसके लिए केवल मिज़राब के बोलों के गढ़न को समझ लेना आवश्यक है और उसी के आधार पर अलंकार के लिए मन चाहे स्वर सुनिश्चित कर आसानी से बजाया जा सकता है। जैसे—आठ मात्रा का ये बोल इस प्रकार है—'दा दिर दिर दिर दाऽरदा दाऽरदा दाऽ' (बोलो को एक दा पर भी बजाया जा सकता है तथा दो दा तीन स्वरों पर भी ये बोल का अभ्यास कराया जा सकता है। जैसे—सरे, ग रे, गरे स (अथवा — स रे रे गग रेरे ग-ग रे-रे स)[6]

शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के द्वारा अध्ययन में की गई त्रुटियों का निदान कर उपचारात्मक शिक्षण प्रदान किया जाता है। इसमें विद्यार्थियों के दो समूह बनाए जाते हैं। जिसमें से एक समूह में उन विद्यार्थियों को रखा जाता है जिन पर यह परीक्षण किये जाते हैं जिसे प्रयोगात्मक समूह कहते हैं। इस समूह का शिक्षक अधिक अवलोकन करता है। निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की प्रक्रिया के दौरान सभी गतिविधियाँ इसी (प्रयोगात्मक) समूह को ध्यान में रखकर की जाती है। दूसरा समूह वह होता है जिसमें वे विद्यार्थी रखे जाते हैं जिनमें प्रथम समूह में सम्मिलित विद्यार्थियों द्वारा जो त्रुटियाँ की जा रही हैं वे त्रुटियाँ ना की जाए। अर्थात् जिन विद्यार्थियों ने विषय-वस्तु को सही रूप में सीख लिया है उन्हें दूसरे समूह में रखा जाता है। निदान के बाद प्रथम समूह (प्रयोगात्मक समूह) को उपचारात्मक अभ्यास मालाओं द्वारा उपचारात्मक शिक्षण दिया जाता है जिससे उनके द्वारा की गई त्रुटियों में सुधार किया जा सके। तत्पश्चात् उनकी तुलना दूसरे समूह के विद्यार्थियों से की जाती है। जब दोनों समूह में साम्यता आ जाती है तभी इस नैदानिक शिक्षण प्रक्रिया को सफल माना जाता है।

अत: संगीत कला की कोई भी विधा (गायन, वादन, नृत्य) हो उस ज्ञान को छात्रों द्वारा उचित रूप में ग्रहण किया जाना आवश्यक है। अत: शिक्षक की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि विद्यार्थी द्वारा संगीत सीखने में की गई त्रुटियों का सही रूप में पता लगाने के लिए संगीत में निदानात्मक परीक्षण सर्वथा उपर्युक्त उपकरण है। साथ ही त्रुटियों के निराकरण के लिए उपचारात्मक अभ्यास भी वांछनीय है ताकि विद्यार्थी द्वारा भूतकाल में की गई त्रुटियाँ भविष्य में न की जाएँ और विद्यार्थी द्वारा की जाने वाली त्रुटियों को इन परीक्षणों द्वारा प्रारम्भिक दौर में ही दूर किया जा सके जिससे विद्यार्थियों को संगीत की सही तकनीक का ज्ञान हो सके। इस प्रकार निदानात्मक परीक्षण व उपचारात्मक शिक्षण संगीत कला के शिक्षण को प्रभावी बनाते हैं और विद्यार्थियों के संगीत कौशल में वृद्धि करने में सहायक होते हैं। इसीलिए 'निदानात्मक परीक्षण व उपचारात्मक शिक्षण' का प्रयोग सफल शिक्षण हेतु किया जाना चाहिए।

पाद-टिप्पणियाँ

1. वर्मा, ध्यान सिंह, संगीत शिक्षण की समस्याएँ, पृ. 20
2. पलनीटकर, अलकनन्दा, शास्त्रीय संगीत की शिक्षा एवं समस्याएँ एवं समाधान
3. पांडे, श्रुतिकांत, हिन्दी शिक्षण : अभिनव आयाम, भाषा एवं शिक्षण विविधों की परिचारिका, पृ. 454
4. शर्मा, मनु, पीएच.डी. शोध-प्रबंध संगीत में भारतीय अभिव्यक्ति पर उपचारात्मक कार्यक्रमों की प्रभावकता का अध्ययन, पृ. 240
5. हिन्दी शिक्षण, पृ. 468
6. मिश्र, लाल मणि, तंत्रीनाद, पृ. 76

संदर्भ ग्रन्थ सूची

ध्यान सिंह वर्मा, संगीत शिक्षण की समस्याएँ, भावना प्रकाशन, पटपड़गंज, दिल्ली

पलनीटकर, अलकनन्दा, शास्त्रीय संगीत की शिक्षा एवं समस्याएँ एवं समाधान, सम्पादक, 1957, आदित्य प्रकाशन

पांडे, श्रुतिकांत, हिन्दी शिक्षण : अभिनव आयाम, भाषा एवं शिक्षण विविधों की परिचारिका, एक्सैस पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010

शर्मा, मनु, पीएच.डी. शोध-प्रबंध संगीत में भारतीय अभिव्यक्ति पर उपचारात्मक कार्यक्रमों की प्रभावकता का अध्ययन, 2008, वनस्थली विद्यापीठ

मिश्र, लाल मणि, तंत्रीनाद, साहित्य रत्नालय, कानपुर, प्रथम संस्करण